शोध मंथन Vol. XVI No.3 July.- Sept. 2025 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X, Impact Factor 8.877 (SJIF)
https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.2025.v16i03.58

निराला के काव्य में विद्रोह का स्वर एवं नारी गौरव

प्राप्तिः 02.09.2025
स्वीकृतः 14.09.2025

58

डॉ0 पूनम पाण्डेय
सहायक आचार्य (हिंदी विभाग)
इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय
अमरकंटक, (म0प्र0)
ईमेलः *poonampandasid@gmail.com*

सारांश

हिन्दी साहित्य के इतिहास में महाप्राण पंडित सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' एक ऐसे युग प्रवर्तक कवि के रूप में प्रतिष्ठित हैं जिन्होंने परंपरा की जड़ता और समाज की रूढ़ियों के प्रति स्वतंत्रता, समानता और मानवीय गरिमा का उद्घोष किया। वे छायावादी आंदोलन के एक महत्वपूर्ण कवि ही नहीं हैं अपितु एक विद्रोही चेतना और सामाजिक क्रांतिकारिता के संवाहक कवि भी हैं। उनकी काव्यधारा में सौंदर्यबोध के साथ–साथ विद्रोह की प्रचंड ज्वाला प्रज्जवलित होती है तथा उसमें काव्य–सौंदर्य, लोक–चेतना, सामाजिक न्याय और नारी सम्मान का अद्भुत समन्वय देखने को मिलता है। वे एक ओर जहाँ रूढ़ियों के विरूद्ध विद्रोह करते हैं वहीं दूसरी ओर शोषित, पीड़ित और उपेक्षित वर्गों के सम्मान एवं गरिमा की पुनर्स्थापना के लिये अपनी कविता को सशक्त माध्यम बनाते हैं। इसी संघर्ष में उनके काव्य में विद्रोह का स्वर और नारी गौरव दो ऐसे महत्वपूर्ण प्रश्न हैं जो उनके कविकर्म की पहचान बनते हैं।

मुख्य बिंदु

गौरव, सामाजिक रूढ़ियाँ, सौन्दर्य–बोध, सामाजिक–न्याय, नवनिर्माण, काव्य–लालित्य, युगद्रष्टा, सामाजिक–विषमता, धार्मिक–पाखंड, यथार्थपरक।

निराला का विद्रोह केवल विरोध करने का स्वर नहीं थ अपितु यह एक सृजनात्मक और मानवतावादी दृष्टिकोण से प्रेरित था, जिसमें नवनिर्माण की आकांक्षा, मनुष्य गरिमा की स्थापना और सामाजिक न्याय की गहरी पुकार निहित थी। उनका विद्रोह बहुआयामी था। वे रूढ़ियों के विरूद्ध थे, अंधविश्वास के विरोधी थे, धार्मिक पाखंडो के प्रबल आलोचक थे और सामाजिक विषमता के प्रति आक्रोश से भरे हुए थे। उनकी रचनाओं में न केवल दीन–हीन, शोषित वर्ग की पीड़ा और करूणा है बल्कि उनके अधिकारों की घोषणा भी है। वे साहित्य में काव्य सौंदर्य के पारंपरिक मानकों को तोड़ते

हैं तथा श्रम, संघर्ष और यथार्थ को कविता का विषय बनाते हैं। इसी प्रक्रिया में वे हिन्दी कविता को राजसी दरबार और काव्य लालित्य से निकलकर जनवीन की सच्चाई से जोड़ते हैं। उन्होंने विद्रोह को क्रांति के साधन के साथ–साथ मनुष्यता की प्रतिष्ठा के रूप में देखा जो मात्र नकारात्मक असहमति नहीं था अपितु वह सत्य की खोज, न्याय की स्थापना और मानवीय गरिमा के संरक्षण के लिए अभिप्रेत था।

सही मायने में उनके आक्रोश का आधार जन सामान्य की पीड़ा है, विशेषतः स्त्री, मजदूर, दलित और वंचित वर्ग के प्रति शोषण के विरूद्ध उनकी काव्य–चेतना मुखर होती है। वस्तुतः निराला के लिए विद्रोह धार्मिक पाखण्ड, सामाजिक विषमता, आर्थिक–शोषण और रूढ़ नैतिकता के विरूद्ध एक नैतिक आवेग था और इस आवेग का मूल स्रोत कवि की अन्तः प्रेरणा और न्याय बोध था। 'राम की शक्ति पूजा', 'भिक्षुक' 'वह तोड़ती पत्थर' 'बादल राग', 'कुकुरमुत्ता' जैसी रचनायें इस विद्रोही स्वर की सशक्त अभिव्यक्ति हैं। इस संबंध में दूधनाथ सिंह लिखते हैं ''निराला के काव्य में 'विरूद्धों का सामंजस्य ही नहीं है, विरूद्धों का टकराव भी है। हास्य और करूणा, औदात्य और व्यंग्य, उल्लास और संत्रास, आस्था और विवेक, शांति और क्रांति, मृत्यु और जीवन का सामंजस्य भी है और टकराव भी।''[1]

अपने नारी विषयक दृष्टिकोण में निराला समकालीन कवियों से भिन्न हैं। छायावादी कविता के आरंभिक चरण में स्त्री को प्रायः सौन्दर्य का प्रतीक, रहस्य की मूर्ति या कल्पना की देवी के रूप में प्रस्तुत किया है। जयशंकर प्रसाद के कामायनी की 'इडा' पंत की 'प्रियतमा' और महादेवी वर्मा की 'विरहिड़ी' स्त्रियां अधिकतर भावुक, कोमल, रहस्यमयी और आत्मविलीन होती हैं। निराला नें छायावाद की इस रूढ़ नारी की छवि को चुनौती दी और एक यथार्थपरक, संघर्षशील तथा सामाजिक रूप से सजग स्त्री का स्वरूप सामने रखा। उन्होंने कल्पना और यथार्थ को नारी चित्रण में ऐसे समन्वित किया कि उनकी नारी संवेदनशील भी है, सशक्त भी है, कोमल भी है और विद्रोही भी। उनकी कविता 'तोड़ती पत्थर' में जहाँ नारी की मेहनत, आत्मबल और गौरव को प्रतिष्ठा दी गयी है वहीं 'सरोज–स्मृति में' पिता और कवि की भावुकता के साथ नारी के प्रति करूणा और सम्मान का उदात्त रूप दृष्टिगत होता है। निराला का यह नारी दृष्टिकोण विद्रोह का ही एक रूप है–स्त्री के अपमान, शोषण और वंचना के विरूद्ध संवेदनात्मक प्रतिरोध। उन्होंने नारी को पूज्य नहीं बल्कि समान अधिकारों से संबलित एक स्वतंत्र सत्ता माना। यही कारण है कि वे नारी को पुरूष सत्ता की अधीनता से बाहर निकालकर उसे समाज निर्माण में सहभागी और स्वाधीन अस्तित्व के रूप में प्रतिष्ठित करते हैं। निराला की साहित्यिक आलोचना में रामविलास शर्मा लिखते हैं, ''निराला नें छायावाद को आत्मकेन्द्रिता से बाहर निकाला। उनकी स्त्रियाँ भावुक नहीं संघर्षशील हैं।''[2]

इस प्रकार निराला का काव्य सौंदर्य और भावुकता का संसार नहीं बल्कि संघर्ष, चेतना और सामाजिक न्याय की भूमि है। विद्रोह और नारी गौरव उनके काव्य में एक दूसरे के पूरक हैं–दोनों में मानवता की प्रतिष्ठा और यथास्थिति के विरूद्ध प्रतिकार का स्वर है। इस लेख का उद्देश्य निराला के काव्य में उपस्थित विद्रोह के स्वर और नारी गौरव के आयामों का सम्यक् विवेचन करते हुए यह स्पष्ट करता है कि किस तरह निराला एक सामाजिक चेतना से सम्पन्न कवि हैं और जिन्होंने कविता का मात्र सौन्दर्य का साधन नहीं अपितु व्यापक परिवर्तन का एक सर्वसम्पन्न एवं सशक्त माध्यम बनाया।

https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.2025.v16i03.58

सामाजिक विसंगतियों के प्रति आक्रोशः

निराला की काव्य चेतना सामाजिक यथार्थ रूप से जुड़ी हुई है। वे एक ऐसे कवि हैं जिन्होंने समाज के कमजोर, उपेक्षित और पीड़ित वर्ग की वेदना को काव्य में स्थान देकर साहित्य को संवेदना का सशक्त माध्यम बनाया। उन्होंने अपने व्यक्तिगत जीवन में जिन आर्थिक कठिनाइयों, सामाजिक अपमान और उपेक्षा का अनुभव किया वही उनके काव्य में सामाजिक अन्याय के प्रति तीव्र आक्रोश के रूप में व्यक्त हुआ है।

सामाजिक विसंगतियों के प्रति निराला की दृष्टि तटस्थ या सहानुभूतिपूर्ण नहीं थी, वह प्रतिरोध और विद्रोह से भरी हुई थी। वे सामाजिक शोषण, जाति व्यवस्था, नारी उत्पीड़न, श्रमिकों की दुर्दशा, भूख–गरीबी और उपेक्षा के विरूद्ध कवि की भूमिका में नहीं बल्कि एक जननायक के रूप में उपस्थित होते हैं। वे समाज को स्थिर संरचना नहीं परिवर्तनशील व्यवस्था मानते हैं। उनके आक्रोश का सबसे प्रमुख क्षेत्र वह समाज है जो श्रमिक वर्ग का शोषण और उपेक्षा करता है। वे उस श्रमिक समाज की दुर्दशा को देखकर आक्रोश से भर उठते हैं जो अत्यधिक श्रम करने के बावजूद भी दो जून की रोटी की व्यवस्था करने में सक्षम नहीं हो पाता । अपनी कविता 'वह तोड़ती पत्थर' में एक ऐसी स्त्री की दशा का चित्रण करते हैं जो चिलचिलाती धूप में अपनी आर्थिक परेशानियों से मुक्ति पाने के लिये घनघोर परिश्रम कर रही है और समाज उसके प्रति बेहद ही असंवेदनशीलता का परिचय देता है।

"वह तोड़ती पत्थर/देखा उसे मैनें इलाहाबाद के पथ पर
कोई न छायादार, पेंड़ वह जिसके तले बैठी हुई स्वीकार
श्याम तन, भर बंधा यौवन,नत नयन, प्रिय–कर्म–रत–मन,
गुरू हथौड़ा हाथ , करती बार–बार प्रहार–
सामने तरूमालिका, अट्टालिका प्राकार।"[3]

इस कविता में वर्णित उपरोक्त दृश्य सामंती और पूंजीवादी समाज पर करारा व्यंग्य हैं। कवि इस सच्चाई को लेकर आक्रोशित है कि समाज की सम्पन्नता का आधार स्तम्भ यही मेहनतकश वर्ग है और उसे ही जीवन की मूलभूत सुविधाओं तक से वंचित रखा जाता है। कविता की नारी प्रतीक बन जाती है उस संघर्शशील समाज का जो कठोर परिश्रम करने वाला है और भयंकर शोषण का शिकार है। उच्च वर्ग की विलासिता और निम्न वर्ग की दीनता को देखकर उनका मन गहरी टीस, वेदना एवं छटपटाहट से भर उठता है। सामाजिक–विषमता के कारण मनुष्य की दशा कितनी दयनीय हो गई है उसका मार्मिक चित्रण निम्न पंक्तियों में हुआ हैः

"वहा आता–दो टूक कलेजे के करता पछताता पथ पर आता,
पेट पीठ दोनों मिलकर हैं एक चल रहा लकुटिया टेक।"[4]

कवि की इन क्रान्तिकारी भावनाओं से यह स्पष्ट होता है कि वे समाज से सामाजिक विषमता को दूर करके सामाजिक समता की स्थापना के लिये कटिबद्ध थे। पूंजीपतियों को आइना दिखाते हुए वे कहते हैं कि तुम्हारी यह 'रंगो'–आब', चमक–दमक, गरीबों के शोषण पर टिका हुआ है। ऐसे पूंजीपतियों को वे प्रतीकात्क शैली में फटकारते हुए कहते हैं–'अबे, सुनबे, गुलाब,/भूल मत जो पाई खुशबू, रंगों आब, खून–चूसा खाद का तूने अशिष्ट/डाल पर इतराता है कैपेटलिस्ट।"[5]

इस प्रकार निराला के काव्य में सामाजिक विषमता के प्रति आक्रोश दिखाई देता है। वे सचमुच ऐसे समाज का निर्माण करना चाहते थे–जो शोषणमुक्त हो, जहाँ अन्याय एवं अत्याचार के लिये कोई स्थान न हो। भारत की सामाजिक रूढ़ियों एवं विषमता को देखकर निराला दुर्गा मां का आह्वान करके ताण्डव नृत्य करने के लिये कहते हैं जिससे आसुरी शक्तियों का विनाश हो सके, एवं जीर्ण– शीर्ण व्यवस्था नष्ट हो जाये और यहां नवजीवन का संचार हो जाय। निराला के गीतों मे ंयुग–युग से प्रताड़ित, प्रवंचित एवं पीड़ित दलितों के प्रति करूणा है। वे प्रभु से प्रार्थना करते हैं–

"दलित जन पर करो करूणा / दीनता पर उतर आए,
प्रभु तुम्हारी शक्ति अरूणा।"[6]

निराला की कविताएँ 'बादल राग', 'डिप्टी साहब आए', 'जागो फिर एक बार', 'सडक के किनारे की दूकान', उद्बोधन परक हैं तथा वर्ग संघर्ष की प्रेरक हैं। 'बादल राग' में कृषकों की दीन–हीन दशा का चित्रण करने के साथ–साथ कवि नें क्रांति के प्रतीक बादलों का आह्वान इन शब्दों में किया है–

"जीर्ण बाहु है शीर्ण शरीर / तुझे बुलाता कृषक अधीर,
ए विप्लव के वीर / चूस लिया है उसका सार,
हाड़ मात्र ही है आधार / ए जीवन के पारावार।"[7]

उनकी कविता 'राम की शक्ति पूजा' में भी अन्याय और अत्याचार पर सत्य और न्याय की विजय दिलाई गई है। रावण जैसे दुश्ट और अत्याचारी एवं अन्यायी व्यक्ति आज भी हमारे समाज में हैं जो किसी की गृहलक्ष्मी को शक्ति के बल पर हरण कर अट्टहास करते हैं। ऐसे स्थिति में असहाय व्यक्ति की आंखों में दो बूद आँसू टपकते हैं–

"खिंच गये दृगों में सीता के राममय नयन / फिर सुन रहा अट्टहास रावण खल–खल,
भावित नयनो से सजल गिरे दो मुक्ता दल।[8]

निराला ने अपनी 'प्रगल्भ प्रेम की कविता में मनुष्य की मुक्ति और कविता की मुक्ति को अभिन्न मानते हुए बंधनमय छन्दों की छोटी राह से ही नहीं जीवन की अनेक रूढ़ियों से निकलने की इच्छा प्रकट की है।

निराला के काव्य में नारी अस्मिता'–

निराला का साहित्य विशेष रूप से उनका काव्य नारी की पारंपरिक छवि को चुनौती देता है। यह छवि अबला, सहनशील, पतिव्रता, त्यागमयी और शांन्त स्वभाव वाली नहीं अपितु संघर्षशील, आत्मनिर्भर, सजग और सामाजिक असमानताओं के विरूद्ध खड़ी होने वाली नारी की है। उनकी रचनात्मक दृष्टि इस छवि को केवल केवल कल्पनालोक में नहीं बल्कि यथार्थ के धरातल पर गढ़ती है। वस्तुतः निराला की लेखनी जिस समय प्रवाहमान थी, वह भारतीय समाज के लिए संक्रमण काल था। एक ओर स्वतंत्रा आन्दोलन ने सामाजिक चेतना को जाग्रत किया, वहीं दूसरी ओर समाज में नारी की स्थिति अभी भी दोयम दर्जे की बनी रही। शिक्षा, सम्पत्ति, मताधिकार और स्वतंत्र जीवन जीने का अधिकार स्त्रियों के लिये अत्यंत ही सीमित था। इसी पृष्ठ भूमि में निराला नें स्त्री अस्मिता की रक्षा के लिए अपने काव्य को सशक्त माध्यम बनाया। निराला के समग्र साहित्य और विचारधारा

पर दृष्टिपात करें तो स्पष्ट होता है कि ''नारी उनके साहित्य का एक मुख्य विषय है और नारी मुक्ति उनकी विचारधारा का एक प्रमुख लक्ष्य।[9]

नारी अधिकार का पुरजोर समर्थन करते हुए निराला लिखते हैं, ''स्त्रियाँ भी पुरूषों की तरह तमाम अधिकार प्राप्त अपनी शक्ति का जौहर दिखा सकती है। परिवर्तन जिस प्रकार संसार की सभी वस्तुओं के लिये है, उसी तरह स्त्री स्वभाव के लिये भी। हाँ यह बात जरूर है कि स्त्रियों के तमाम अधिकारों की पुरूषों की तरह वृद्धि होने पर समाज की धारा एक दूसरी प्रणाली से होकर बहेगी। पीसना, कूटना, बर्तन मलना, चौका देना, रोटी पकाना, बच्चों की सेवा करना, घर–गृहस्थी के कार्य कार्य संभालना आदि जो कार्य अब तक स्त्रियों के अधीन थे, वे कार्य और गुण जिनसे यहाँ वाले उन्हें गृहलक्ष्मी कहकर पुकारते थे, नहीं रह जाएंगे।''[10]

अपनी सरोज स्मृति कविता में निराला नें अपनी पुत्री सरोज के माध्यम से नारी के गौरव, शिक्षा, आत्मबल और सम्मान को प्रतिष्ठा दिया है। निराला नें इसे 'अश्रुसंवेदना' का 'शोक गीत' नहीं एक तेजस्विनी नारी के प्रति श्रद्धांजलि के रूप में प्रस्तुत किया है। समाज में पुत्री के विवाह के लिए दहेज की समस्या आती है और रूढ़िमुक्त विवाह करने पर ब्राह्मण समाज द्वारा विरोध किया जाता है। आर्थिक विपन्नता की स्थिति में एक पिता द्वारा अपनी पुत्री का ठीक से पालन–पोषण न कर पाने का क्षोभ इस प्रकार व्यक्त होता है–

''धन्ये मैं पिता निरर्थक था। कुछ भी तो हित कर न सका,
जाना तो अर्थागमोपाय/पर रहा सदा संकुचित काय,
लखकर अनर्थ आर्थिक पथ पर/हारता रहा मैं स्वार्थ समर।''

नारी स्वतंत्रता समाज के विकास के लिए उतनी ही आवश्यक है जितनी की स्वयं नारी के लिए। स्त्री के लिये अबला से सबला बनना उसकी स्वतंत्र पहचान के लिये आवश्यक है। 'अर्चना' कविता में निराला लिखते हैं–

''उठे उत्स, उत्सुक मन, देखे वह मुक्त गगन मुक्त धरा, मुक्तानन मिला दे आदि प्राण।''[12]

इसी प्रकार 'तुलसीदास कविता में उद्धृत है–

''बल की महिमा बोली अबला,/जागी जलपर कमला, अमला मति डोली।''[13]

सामाजिक–राजनैतिक–आर्थिक रूढ़ियों से मुक्ति–

सामाजिक रूढ़ियाँ जिस तरह शूद्रों को दास बनाए हुए थीं, वैसे ही स्त्रियों की भी पराधीनता का कारण थीं। निराला लिखते हैं–

''प्राचीन शीर्णता नें नवीन भारत की शक्ति को मत्यु तरह घेर रखा है। घर की छोटी सीमा में बंधी हुई स्त्रियाँ अपने अधिकार अपने गौरव, देश तथा समाज के प्रति अपना कर्तव्य सब कुछ भूली हुई है।[14]

निराला आगे लिखते हैं ''हम लोग स्वयं जिस तरह गुलाम हैं, उसी तरह अपनी स्त्रियों को गुलाम बना रखा है, बल्कि उन्हें दासों की दासियाँ कर रखा है। इस महादैन्य से उन्हें शीघ्र मुक्ति देनी चाहिए, तभी हमारी दासता की बेड़ियाँ कट सकती हैं।[15]

भारतीय नारियों की पराधीनता और निर्बलता के प्रति निराला सतत जागरूक थे। उन्होंनें अपने कई काव्य संग्रहों में नारियों के कई रूपों के प्रति अपनी आस्था व्यक्त की है। राजनीतिक रूढ़ियों के कारण पुरूषों को राजनीतिक क्षेत्र में सर्वथा योग्य समझा जाता था, वहीं महिलाओं को अक्षम समझकर घर की चहारदीवारी तक सीमित रखा जाता था। निराला उसके विरोधी थे, उनका मानना था कि स्त्री और पुरुष दोनों के परस्पर सहयोग से राजनीतिक क्षेत्र के लक्ष्य हासिल किए जा सकते हैं। नारियों को राजनैतिक दृष्टि से सफल होने क लिए कवि देवी माँ का आहवान करते हुए कहता है–

''माँ तू भारत की पृथ्वी पर, उतर रूपमय माया तन धन,/देवव्रत नरवर पैदाकर, फैला शक्ति नवीन/फिर उनके मानस–शतदल पर अपने चारू चरण युग रखकर, खिला जगत तू अपनी छवि में, दिव्य ज्योति हो लीन।'[16]

निराला अपने साहित्य में नारियों के वैवाहिक स्वतंत्रता की पक्षधरता को स्पष्ट करते हैं और 'निरूपमा' के माध्यम से अन्तर्जातीय विवाह की वकालत कर समाज की रूढ़िग्रस्त परंपरा को तोड़ने का यत्न करते दिखाई देते हैं। इसके साथ ही उन्होंने बाल–विवाह प्रथा का भी पुरजोर विरोध किया और विधवा स्त्रियों की दशा सुधारने के निमित्त उनके साथ होने वाले अत्याचार को अपनी कविताओं के माध्यम से उद्घाटित करने का यथेष्टतम प्रयास किया। 'परिमल' में सकलित 'विधवा' कविता में एक विधवा स्त्री के प्रति उनके उदत्त विचारों को देखा जा सकता है–

''वह इष्ट देव के मंदिर की पूजा सी,
वह दीप–शिखा–शांत, भाव में लीन,
वह क्रूर काल ताण्डव की स्मृति रेखा–सी
वह टूटे, तरू की धुरी लता–सी–दीन–
दलित भारत की ही विधवा है।''[17]

एक विधवा स्त्री के लिए इस तरह भावों की अभिव्यक्ति निराला के पूर्व किसी कवि ने नहीं की। इसी क्रम में निराला ने स्त्रियों की शिक्षा पर अत्यधिक बल दिया। इस संबंध में उनके विचार थे–''ज्ञान के बिना जीवन व्यर्थ है। निर्वाह होना कठिन है। स्वावलंबन नहीं आता। स्वावलंबन कोई पाप नहीं, प्रत्युत पुण्य है। जब स्त्रियों के हाथ काम लग जायेंगे, कार्य की सफलता हमें तभी प्राप्त होगी। अभी जो काम स्त्रियां करती हैं, वह काम नहीं वह संस्कारों का प्रवर्तन है।''[18]

उन्होंने अनेकों लेख और टिप्पणियों के माध्यम से नारी मुक्ति के लिये शिक्षा के महत्व का रेखांकन किया है। परमिल की जागरण कविता में कवि नें इसी भाव को कुछ इस तरह व्यक्त किया है–

''मुक्त द्वार खुला था/सदा ही संसार को/
शिक्षा देने के लिए/'त्वमसि' महाज्ञान।''[19]

स्त्री पुरूष समानता–

निराला का मानना था कि स्त्री–पुरूष दोनों के एक हुए बिना एक पूरा संसार तैयार नहीं हो सकता। इसलिए आवश्यक है कि स्त्रियों को भी पुरूषों के समान अधिकार मिले और उनके समान

ही वे देश के सामाजिक–सांस्कृतिक जीवन में अपनी प्रतिभागिता सुनिश्चित करें। स्त्रियों के सम्बन्ध में उनका अभिमत था कि ''वे दिन बीत गए जब यह बात स्त्री के लिए प्रशंसा समझी जाती थी कि वह चित्र लिखित–कपि से डर जाती है XXX पहले दोनों के भाव और कार्य अलग–अलग थे, अब दोनों के भाव और कार्यों का एक ही में साम्य होना आवश्यक है।''[20] अपनी 'गीत गुंज' कविता में वे कहते हैं–

''एकता के ये मनोहर चित्र दो, / एक पथ के पथिक प्रियतम मित्र दो,
एक ही होकर रहे जब तक रहे / एक ही जीवन–मरण सुख–दुख सहे।''[21]

इसी प्रकार निराला की कविता 'तुम और मैं' में स्त्री–पुरूष की समानता के महत्व को स्पष्ट करते हुए कहा गया है–

''तुम स्वच्छेचारी मुक्त पुरूष / मैं प्रकृति, प्रेम जंजीर।
तुम शिव हो मैं हूं शक्ति / तुम रघुकुल गौरव रामचन्द्र,
मैं सीता अचला भक्ति।''[22]

नवजागरण के तीसरे चरण में निराला एकमात्र ऐसे हिन्दी रचनाकार थे, जो स्त्री समाज को प्रत्येक स्तर पर मुक्ति दिलाना चाहते थे। उन्होंने अपनी 'मुक्ति' कविता में नारी को पराधीनता के कारावास से बाहर निकलकर एक स्वतंत्र जीवन जीने का आवाहन करते हैं। नारी जागरण के प्रबल समर्थक निराला की सशक्त पंक्तियां आधुनिक नारी के जीवन में मुक्ति का उद्घोष करती हैं–

''तोड़ो तोड़ो तोड़ो कारा / पत्थर की निकलो फिर
गंगा–जल–धारा / गृह–गृह की पार्वती।
पुनः सत्य सुंदर को सँवारती, उर–उर की बनो आरती।
भ्रान्तों की निश्चल ध्रुवतारा तोड़ो तोड़ो तोड़ो कारा।''[23]

निराला के काव्य में नारी आदिशक्ति के अनेकों रूपों में प्रतिष्ठित हुई है। देवी सरस्वती, काली, दुर्गा, महाशक्ति आदि के रूप में उसका प्रकटन हुआ है। कवि देवी के रूप में माता की कल्पना करता है और उसे संघर्ष में सक्रिय रूप से प्रेरणा देने वाली शक्ति के रूप में प्रस्तुत करता है। 'तुलसीदास की रत्नावली' में वे लिखते हैं–

''देखा शारदा नील–वसना / है सम्मुख स्वयं सृष्टि–रचाना।''[24]

पंचवटी प्रसंग–2 में लक्ष्मण ने सीता को ही अपनी माता के रूप में देखा और उन्हें आदिशक्ति बताया–

''आदिशक्ति–रूपिणी शक्ति से,
जिनकी शक्तिशालियों में सत्ता है–
माता है मेरी वो।''[25]

इस प्रकार निराला की नारी केवल उनके, समय की ही नहीं अपितु वह समकालीन और भविष्य की स्त्री का प्रतिनिधित्व करती है। उनकी कविताएँ स्त्री को सम्मान और समानता दिलाने की चेतना और आग्रह का साधन बनती हैं। 'स्वत्व की बात, जग में गूंजे तेरी आवाज।'' यह गूँज नारी अस्मिता का वह स्वर है जो निराला के काव्य को क्रांतिकारी विमर्श का केन्द्र बनाता है।

निष्कर्ष

उपर्युक्त विवेचन के आलोक में कहा जा सकता है कि निराला हिन्दी काव्य परम्परा में नारी चेतना के प्रथम क्रान्तिकारी कवि हैं और उनका काव्य सामाजिक अन्याय और विषमता के विरूद्ध तीव्र आक्रोश का काव्य है। उनका आक्रोश केवल भावनात्मक नहीं है अपितु वह यथार्थ और परिवर्तन की शक्ति से प्रेरित है। वे अपने काव्य के माध्यम से श्रमिकों, दलितों, स्त्रियों और उपेक्षितों का आवाज बनते हैं। निःसन्देह उनकी कविताएँ स्त्रीमुक्ति चेतना के आप्लावित हैं और समाज परिवर्तन का माध्यम बनती है। उन्होंनें सामाजिक विषमता, धार्मिक पाखण्ड, स्त्री उपेक्षा और पारंपरिक मानसिकता पर जबरदस्त प्रहार तो किया ही साथ ही साथ नारी को उसकी पूर्ण मानवीय गरिमा दिलाने में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया। समकालीन स्त्री–विमर्श की दृष्टि से निराला का काव्य अत्यन्त प्रासंगिक है। उनकी कविताएँ आज भी स्त्री को उसकी अस्मिता, स्वाधीनता और गरिमा की अनुभूति कराती हैं। इस प्रकार निराला हिन्दी कविता के प्रथम जनवादी, स्त्री–सजग कवि के रूप में प्रतिष्ठित हैं जिन्होंने नारी चेतना को सृजन, विचार और संघर्ष का स्वर दिया।

संदर्भ

1. दूधनाथ सिंह, निरालाः आत्महन्ता आस्था, नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ० सं०–106
2. समविलास शर्मा, निराला की साहित्य साधना, खंड 1, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ० सं०–106
3. निराला रचनावली, खण्ड–1, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ० सं०–342
4. वही पृ० सं०–76–77
5. निराला संचयिका; कुकुरमुत्ता,संपा0 रमेश चन्द्र शाह, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ० सं०–128
6. निराला रचनावली खण्ड–2, पृ० सं०–39
7. पुस्तक आरोह भाग–2 निराला, प्रका0 एन0सी0ई0आर0टी0 संस्करण 2022, पृ० सं०–34
8. निराला संचयिका, राम शक्ति पूजा, संपा0 रमेश चन्द्र शाह, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ० सं०–97
9. निराला और मुक्तिबोध (चार लंबी कविताएँ), नन्द किशोर नवल, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ० सं०–12–13
10. निराला रचनावली–6, पृ० सं०–255
11. निराला रचनावली–1, पृ० सं०–315
12. वही, पष0 303, निराला रचनावली–2, पृ० सं०–258
13. निराला रचनावली 1, पृ० सं०–303
14. निराला की साहित्य साधना–2, डा0 रामविलास शर्मा, पृ० सं०–35
15. वही, पृ० सं०–35–36

16. निराला रचनावली–1, पृ० सं०–258
17. वही, पृ० सं०–72
18. निराला रचनावली–6, पृ० सं०–130–131
19. निराला रचनावली–1, पृ० सं०–186
20. निराला रचनावली–6, पृ० सं०–129
21. निराला रचनावाली–1, पृ० सं०–182
22. वही, पृ० सं०–50
23. वही, पृ० सं०–363
24. निराला रचनावली खंड 1, 'तुलसीदास, पृ० सं०–303
25. वही, पंचवटी प्रसंग–2, पृ० सं०–54